International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 04-07-2023, Accepted: 19-07-2023, Published: 05-08-2023
Volume 9, Issue 3, 2023, Page No. 41-43

राज्य विधानमंडल के अंग के रूप में राज्यपाल की भूमिका की प्रासंगिकता

राहुल गुप्ता
स्नातकोत्तर, राजनीति विज्ञान, सेंट जॉन्स कॉलेज आगरा, डॉ. भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय आगरा, दिल्ली, भारत

सारांश
भारत की संसदीय शासन व्यवस्था के तहत केंद्र की भांति राज्यों में विधानमंडल का एक महत्वपूर्ण अंग राज्यपाल है जो राज्य में संवेधानिक प्रमुख तथा केंद्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन करता है. राज्यपाल केंद्र तथा राज्यों के बीच एक सेतु अथवा पुल के रूप में कार्य करता है. इसे सहकारी शासन के प्रमुख अंगो में से एक माना जाता है, जिस पर हमारा लोकतंत्र गर्व करता है।
भारतीय संविधान के भाग 6 में अनुच्छेद 153 से 167 तक राज्य कार्यपालिका के बारे में उल्लेख है. राज्य कार्यपालिका के अंतर्गत मुख्यमंत्री, राज्यपाल, मंत्रिपरिषद और राज्य के महाधिवक्ता शामिल होते हैं. राज्यपाल राज्य का कार्यकारी प्रमुख होता है. भारत में राज्यपाल के पद का सृजन ब्रिटिश शासन के दौरान हुआ, जहाँ सर्वप्रथम बंगाल में गवर्नर नियुक्त किया गया. वर्ष 1858 से गवर्नर का पद अत्यंत महत्वपूर्ण होने लगा था जब भारत ब्रिटिश क्राउन द्वारा शासित किया जाने लगा. प्रांतीय गवर्नर क्राउन के एजेंट होते थे जो गवर्नर जनरल की देखरेख में काम करते थे. वर्ष 1935 के भारत सरकार अधिनियम के बाद गवर्नर को अब प्रान्त के विधायिका के मंत्रियों की सलाह के अनुसार कार्य करना था लेकिन फिर भी विशेष उत्तरदायित्व और विवेकाधीन शक्ति उसी में निहित रही।
संविधान सभा में राज्यपाल के पद पर व्यापक रूप से बहस चली थी जिसने ब्रिटिश काल में उसकी भूमिका को बदलते हुए राज्यपाल के पद को यथावत बनाये रखने का निर्णय लिया. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अब तक राज्यपाल की भूमिका को विभिन्न सन्दर्भ में देखने के बाद उसकी भूमिका को कई अवसरों पर उसके द्वारा लिए गए महत्वपूर्ण फैसलों के लिए सराहा गया तो वहीं कई मौकों पर उसकी भूमिका के लिए उसकी कड़ी आलोचना भी की गई. राज्यपाल की राज्य में भूमिका संवेधानिक तंत्र के सफल संचालन की रहती है जिसके लिए वह राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में अपने कर्तव्य का निर्वहन करता है. कई अवसरों पर भारत सरकार द्वारा गठित की गयीं विभिन्न समितियों तथा आयोगों ने राज्यपाल की भूमिका को लेकर तथा राज्य में संविधान मुखिया के रूप में अपनी जिम्मेदारियों के सफल संचालन व क्रियान्वयन हेतु महत्वपूर्ण सुझाव दिए जाते रहे हैं जिनका विवरण यहाँ करना आवश्यक हो जाता है।

मूल शब्द: नियुक्ति, प्रसादप्रयंत का सिद्धांत, संवैधानिक मुखिया, सहकारी परिसंघवाद, राष्ट्रीय एकता और अखंडता, संयोजक की भूमिका, कार्यकारी प्रमुख, विवेकाधीन शक्तियाँ आदि

राज्यपाल–परिचय

भारतीय संघीय व्यवस्था जो कनाडा की संघीय व्यवस्था पर आधारित है, के द्वारा राज्यपाल का पद तथा केंद्र द्वारा राज्य में उसकी नियुक्ति सम्बन्धी संवेधानिक प्रावधान किये गए हैं. संविधान के अनुच्छेद 155 के तहत राज्यपाल की नियुक्ति केंद्र सरकार करती है जो राज्य में संवेधानिक तंत्र के सुचारु संचालन हेतु उत्तरदायी माना जाता है।
अनुच्छेद 154 के तहत राज्यपाल राज्य की समस्त कार्यपालिका शक्ति का मुखिया होता है जिसका प्रयोग वह स्वयं या अपने द्वारा नियुक्त किसी अधिकारी के माध्यम से करता है. राज्यपाल केंद्र में राष्ट्रपति की भांति राज्य में विशेषधिकार तथा विवेकाधीन शक्तियाँ प्राप्त करता है. साथ ही वह राष्ट्रपति की भांति ही न्यायिक, कार्यकारी, विधायी, क्षमादान आदि शक्तियों का प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होता है. मुख्यमंत्री की नियुक्ति भी राज्यपाल करते हैं लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि सरकार बनाने का दावा करने वाले दलों के पास स्पष्ट बहुमत हो. मंत्रिपरिषद के सदस्ययों की नियुक्ति वह मुख्यमंत्री की सिफारिश पर करता है तथा साथ ही उनकी बर्खास्तगी भी मुख्यमंत्री की अनुशंसा पर राज्यपाल करता है. इस प्रकार मंत्रिपरिषद के सदस्य राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त पद धारण करते हैं. इसके अलावा राज्य लोकसेवा आयोग के सदस्ययों, महाधिवक्ता, राज्य वित्त आयोग के अध्यक्ष आदि की नियुक्ति भी राज्यपाल करते हैं. हालांकि राज्य लोकसेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्ययों को उनके पद से हटाने की शक्ति राज्यपाल के पास न होकर राष्ट्रपति के पास होती है. राज्यपाल राज्यविधानमंडल द्वारा पारित विधेयकों के सम्बन्ध में भी शक्तियाँ रखता है. राज्यपाल राज्य में केंद्र तथा राज्य सरकार के बीच संवाद, सहयोग, विचार–विमर्श, शासन तथा संचार का एक जरिया होता है जो किसी भी राज्य शासन के लिए जरुरी माना जाता है. साथ ही राज्य सरकारें स्वेछचारी तथा निरंकुश रवैया अख्तियार न कर लें, इस पर अंकुश लगाने के लिए तथा राज्य विधानमंडल द्वारा मनमाने तरीके तथा बिना विचार–विमर्श व चर्चा के कोई विधेयक पारित कर कानून अथवा अधिनियम न बना दे, के लिए राज्यपाल की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है।

राज्यपाल की भूमिका तथा मंत्रिपरिषद के साथ विवाद की प्रष्ठभूमि

राज्यपाल की भूमिका स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही संदेहास्पद प्रवृति की बनी रही है. यही कारण है कि राज्यपाल की भूमिका को लेकर संविधान सभा में भी व्यापक चर्चा तथा विचारों का आदान प्रदान हुआ. राज्यपाल को लेकर संविधान सभा में दो विरोधी मत थे. एक मत यह था कि क्या राज्यपाल को भी राष्ट्रपति के समान व्यस्क मताधिकार के आधार पर चुना जाये. लेकिन इसका विरोधी मत यह था कि यदि ऐसा हुआ तो राज्य में राज्यपाल और मुख्यमंत्री के नेतृत्व वाली मंत्रिपरिषद के बीच अधिकारों और कर्तव्यों को लेकर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो सकती है जिससे राज्य में अस्थिरता का माहौल बन सकता है. इसको लेकर संविधान सभा के सदस्य के. एम. मुंशी कहते हैं कि यदि ऐसा होता है तो राज्य में सत्तारुन दल चुनाव के समय राज्यपाल के पद के लिए ऐसे ही व्यक्ति का नाम आगे रखेगी जो मंत्रिपरिषद के अभ्यर्थियों से कम महत्व रखता हो. इसका परिणाम

यह होगा कि दल का सर्वोत्तम व्यक्ति राज्यपाल पद के लिए उपलब्ध न हो सकेगा. चुनाव में प्रान्त का जो खर्च बढ़ेगा और जो कार्यशक्ति लगेगी, वह सब बेकार जाएगी. प्रान्त का मुख्यमंत्री ही उसे नामज़द करेगा, इसलिए यह लाज़िमी है कि मुख्यमंत्री से उसका महत्व कम होगा. ऐसी सूरत में कोई कारण नहीं कि इतने बड़े चुनावी तमाशे का आयोजन क्यों किया जाये।

दूसरा मत यह था कि मंत्रियों को नियुक्त या बर्खास्त करने सम्बन्धी अधिकार राज्यपाल के स्वविवेक शक्ति के रूप में किया जाये, जो इतना बड़ा है कि इसे प्रयोग में लाने की शक्ति प्रान्त के संवैधानिक प्रमुख को नहीं होनी चाहिए. अगर मनोनीत राज्यपाल होगा तो स्वाभाविक है कि स्वविवेक से मंत्रियों को बर्खास्त करने की उसे शक्ति ना रह जाएगी. वह केवल एक संवैधानिक प्रमुख की भूमिका में रहेगा. जब तक कि मंत्रिमंडल को निचले सदन में स्थिरता प्राप्त है, प्रान्त के शासन की बागडोर मुख्यमंत्री और उसके दल के हाथों में ही रहेगी. मनोनीत गवर्नर रखने में दूसरा फायदा भी है. उस जगह की बात लीजिये जहाँ बहुमत प्राप्त कोई दल नहीं है या अगर है भी तो वह टुकड़ियों में बँटा है और मुख्यमंत्री का पद पाने के लिए उसे बड़ी प्रतिदूअंदता है. वैसी स्थिति में एक स्वतंत्र व्यक्ति किसी दल से जुड़े व्यक्ति से बेहतर होगा. अच्छा यही होगा कि केंद्र द्वारा मनोनीत राज्यपाल रखा जाये तो प्रान्त की दलगत राजनीति से और उससे उपजी घृणा व आवेश से सर्वथा मुक्त हो।

वहीं दूसरी ओर शिब्बनलाल सक्सेना जैसे सदस्य एक मजबूत राज्यपाल के चुनाव के माध्यम से निर्वाचित किये जाने के पक्षधर थे इससे मुख्यमंत्री तथा राज्यपाल के बीच संघर्ष न होकर राज्य की भलाई हेतु आपस में मिलकर काम करने की भावना उत्पन्न होगी।

इसके अलावा जिस रफ़्तार से राज्यपालों का आचरण या उनकी निष्क्रियता बार–बार न्यायिक सक्रियता का मामला बन रही है, वह राजभवन और सम्बंधित मुख्यमंत्रियों के बीच के संबंधों की खराब स्थिति को दर्शाती है. काफ़ी हद तक राज्यपाल जैसे संवैधानिक ओहदे पर बैठे लोग इस पद का सरेआम राजनितिकरण करते हुए देखे जा सकते हैं. इसके अतिरिक्त राज्यपालों द्वारा राज्य विधानमंडल के माध्यम से पारित विधेयकों तथा मंत्रिपरिषद द्वारा लिए गए निर्णयों को स्वीकृति देने हेतु अनिश्चित काल तक टालने की प्रवृति भी राज्यपाल की संवैधानिक मुखिया की स्थिति को संदेह के घेरे में डालती है जो संघीय ढांचे को भी प्रभावित करता है।

पूर्व में कई बार ऐसे अवसर आये जब राजभवन और मंत्रिपरिषद के बीच विवाद की स्थिति बनी रही. इसका एक बड़ा और प्रमुख कारण केंद्र और राज्य में एक समान दल की सरकार का न होना है. एक दल होने पर केंद्र–राज्य संबंधों पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्यूंकि ऐसे मसलों को पार्टी के संगठनात्मक मंचों पर आपसी बातचीत के माध्यम से सुलझा लिया जाता है।

हाल के समय में भी राज्यपाल/राजभवन और राज्य सरकारों के बीच कई विवाद देखने को मिले, जहाँ कहीं–कहीं पर न्यापालिका को भी हस्तक्षेप करके संघीय ढांचे की रक्षा करनी पड़ी।

जैसे–

1. दिल्ली सरकार बनाम उपराज्यपाल–अपसरों की पोस्टिंग सम्बन्धी अधिकार, घर–घर तक राशन की फ्री डिलीवरी, विवादस्पद शराब नीति, शिक्षा नीति, मंत्रिपरिषद के निर्णयों को स्वीकृति देने सम्बन्धी मसले आदि

2. राज्यपाल बनाम तमिलनाडु सरकार–हाल ही में तमिलनाडु के राज्यपाल द्वारा एक मंत्री को उसके पद से बर्खास्त कर दिया जिसको लेकर राज्यपाल की चौतरफ़ा आलोचना हुई क्यूंकि यह विशेषधिकार मुख्यमंत्री का होता है. मुख्यमंत्री की सिफारिश पर ही राज्यपाल

राज्यपाल की नियुक्ति एवं राज्यपाल व राज्य सरकार के बीच विवाद को कम करने हेतु विभिन्न आयोगों तथा समितियों की सिफारिशें–

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966)

1. उस व्यक्ति को राज्यपाल के पद पर नियुक्त किया जाना चाहिए जिसे सार्वजनिक जीवन एवं प्रशासन का अनुभव हो और जो अपने आप को दलीय पूर्वाग्रहों से मुक्त रख सकता हो
2. राज्यपाल द्वारा अपने स्वविवेक के अधीन प्रयोग की जाने वाली शक्तियों का पर्याप्त स्पष्टीकरण किया जाना चाहिए
3. राज्यपाल की राज्य में नियुक्ति के सम्बन्ध में सम्बंधित राज्य के मुख्यमंत्री से परामर्श लिया जाना चाहिए
4. यदि राज्यपाल को यह समाधान हो जाये कि मंत्रिमंडल को विधानसभा का समर्थन प्राप्त नहीं हो रहा तो उसे विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने के लिए मुख्यमंत्री को कहना चाहिए. यदि मुख्यमंत्री इस सम्बन्ध में प्रभावी कदम नहीं उठाता है या विधानसभा का सत्र बुलाने की सिफारिश नहीं करता, तब राज्यपाल को स्वयं विधानसभा का सत्र बुलाकर स्थिति को स्पष्ट कर देना चाहिए
5. यदि मुख्यमंत्री के त्याग–पत्र या निलंबन के बाद राज्य में वैकल्पिक सरकार बनाने की समस्त संभावनाएं क्षीण हो गयीं हों, तो ही राज्यपाल को विधानसभा भंग करने और राष्ट्रपति को राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने की सिफारिश करनी चाहिए

भगवान सहाय समिति (1970)

1. ऐसा व्यक्ति जो विधानसभा का सदस्य नहीं है या जिसे विधानसभा के लिए मनोनीत किया गया हो, मुख्यमंत्री के रूप में कार्य करना चाहिए, न कि राष्ट्रपति के अभिकर्ता के रूप में
2. जब विधानसभा में किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो तो, तो राज्यपाल को विधानसभा को अधिवेशन बुलाना चाहिए और अधिवेशन में बहुमत से चुने गए व्यक्ति को मुख्यमंत्री नियुक्त करना चाहिए

राजमन्नार समिति (1969)

1. राज्यपाल की नियुक्ति सदैव सम्बंधित राज्य के मुख्यमंत्री से परामर्श करके ही की जानी चाहिए
2. राज्यपाल को साबित कदाचार या अक्षमता के आधार पर केवल उच्चतम न्यायालय की जाँच के बाद ही हटाया जाना चाहिए
3. इस संवैधानिक प्रावधान को तत्काल निरस्त कर देना चाहिए कि, मंत्रिपरिषद, राज्यपाल के प्रसादपर्यंत पद धारण करेगी
4. राज्यपाल के पद पर सेवा प्रदान कर चुके व्यक्ति को केंद्र अथवा राज्य सरकार के अधीन पुनः सेवा में नहीं लेना चाहिए

सरकारिया आयोग (1983)

1. राज्यपाल के पद पर नियुक्त किया जाने वाला व्यक्ति जीवन के किसी क्षेत्र में प्रसिद्ध होना चाहिए
2. राज्यपाल की नियुक्ति से पूर्व सम्बंधित राज्य के मुख्यमंत्री का परामर्श अवश्य लेना चाहिए
3. ऐसा व्यक्ति किसी दूसरे राज्य से सम्बद्ध होना चाहिए
4. उस व्यक्ति ने राजनीति, विशेषकर उस राज्य की राजनीति में अधिक भाग न लिया हो
5. राज्यपाल विधानसभा में बहुमत की स्थिति में सरकार को भंग नहीं कर सकता है

6. राज्यपाल के 5 वर्ष के कार्यकाल को बिना ठोस कारणों के अतिरिक्त बाधित नहीं किया जाना चाहिए
7. जिस राज्य में विपक्षी दल की सरकार हो वहाँ केंद्र में शासक दल के किसी व्यक्ति को राज्यपाल नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए

संविधान समीक्षा आयोग (2000)

1. राज्यपाल का 5 वर्ष का कार्यकाल निश्चित होना चाहिए
2. केंद्र सरकार को राज्यपाल का कार्यकाल समाप्त होने से पूर्व उसे हटाने के सम्बन्ध में मुख्यमंत्री से परामर्श करना चाहिए

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (अगस्त, 2005)

1. अंतर–राज्य परिषद को दिशानिर्देश तैयार करना चाहिए कि राज्यपालों को विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग किस प्रकार करना है
2. अनुच्छेद 356 का प्रयोग अंतिम विकल्प के रूप में किया जाना चाहिए

पुंच्छी आयोग (2007)

1. राष्ट्रपति के लिए अनुच्छेद 61 के तहत निर्धारित महाभियोग प्रक्रिया को राज्यपालों पर भी लागू करने की शुरुआत की जानी चाहिए
2. राज्यपाल द्वारा विश्ववि।ालय के कुलाधिपती के रूप में और अन्य वैधानिक पदों पर कार्य करने की परंपरा को समाप्त कर दिया जाना चाहिए क्यूंकि यह उसके पद के लिए विवादों और सार्वजनिक आलोचना के द्वार खोलता है

अन्य प्रमुख सुझाव

1. एक आचार सहिंता तैयार करने की आवश्यकता है जो राज्यपाल के विवेक और संवैधानिक अधिदेश को निर्देशित करने के लिए कुछ मानदण्डों एवं सिद्धांतों को परिभाषित करे
2. राज्यपाल की नियुक्ति के लिए एक समिति का गठन हो जिसमे प्रधानमंत्री, गृहमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष तथा सम्बंधित राज्य के मुख्यमंत्री हों
3. राज्यपाल का विवेक एक ऐसा विकल्प होना चाहिए जो तर्क द्वारा निर्धारित हो, सद्भावसे संचालित हो और सतर्कता से सयंमित हो
4. राज्यपाल को एक स्वतंत्र, गैर–पक्षपाती व्यक्ति होना चाहिए. वह राज्य के हितों को ध्यान में रखे और यह सुनिश्चित करे कि राज्य एवं केंद्र के बीच कड़ी सुचारु रूप से बनी रहे

निष्कर्ष

उपर्युक्त आलोचनाओं और विवादों के परिणामस्वरुप राज्यपाल की राज्य में भूमिका सर्वाधिक प्रभावशाली व महत्वपूर्ण होती है. राज्यपाल को केंद्र और राज्य सरकार के बीच एक सेतु के रूप में अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियों का उचित प्रयोग, स्वविवेक की शक्ति का तर्कसंगत इस्तेमाल व व्यवहार के अनुसार प्रयोग करना, मंत्रिपरिषद तथा मुख्यमंत्री के साथ आपसी संवाद हमेशा कायम रखना चाहिए।

केंद्र सरकार भी संघीय ढांचे को नुकसान पहुँचाने वाले सभी क़दमों से अपने आप को दूर रखते हुए राज्य तथा राष्ट्र की प्रगति, एकता व संविधान की मूल भावना को हमेशा अक्षुन्य बनाये रखने का प्रयास करना चाहिए. संवैधानिक मुखिया के नाते राज्यपाल संविधान को सर्वोच्च सहिंता मानकर अपने कर्त्तवियों का सफल संचालन करे तो केंद्र–राज्य विवाद का भी समाधान संभव है।

सन्दर्भ सूचि

1. संविधान सभा में बहस के अंश (शिब्बनलाल सक्सेना बनाम के. एम. मुंशी) 31 मई, 1949
2. प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग (1966)
3. राजमन्नार समिति (1969)
4. भगवान सहाय समिति (1970)
5. सरकारिया आयोग (1983)
6. संविधान समीक्षा आयोग (2000)
7. द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2005)
8. पुंच्छी आयोग (2007)
9. द हिन्दू (18 मार्च, 2023 का लेख)
10. राजनीति विज्ञान (अरिहंत पब्लिकेशन)